शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 फरवरी 2014

मोहन राकेश के उपन्यास और अस्तित्ववाद

डॉ.ममता झाला
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी)
श्री कृ.प.महाविद्यालय देवास म.प्र., भारत

शोध संक्षेप

हिंदी साहित्य जगत में जिंदादिल और विशिष्ट व्यक्तित्व के धनी मोहन राकेश अपनी साहित्यिक विशिष्टताओं के कारण साहित्य जिज्ञासुओं में चर्चित रहे हैं। अपने कुशल सृजन शिल्प से हिन्दी साहित्य कोश को विविध बहुमूल्य रत्नरूपी साहित्य कृतियाँ प्रदान करने वाले प्रवीण शिल्पकार मोहन राकेश ने गद्य साहित्य की विविध विधाओं को नव आयाम दिया है। प्रेमचंद युग के परवर्ती साहित्यकारों में मोहन राकेश एक ऐसा नाम है जिसने जीवंत अनुभूतियों को साहित्य में उकेरा है और कहानी, उपन्यास, निबंध, नाटक, एकांकी, बीज नाटक, ध्वनि नाटक, जीवनी आत्मकथा, संस्मरण, डायरी, यात्रावृत, बाल साहित्य आदि विविध गद्य साहित्य के क्षेत्र में अपना कीर्ति स्तम्भ निर्मित किया है। राकेश प्रसादोतर गद्य साहित्य के ऐसे जाज्वल्यमान नक्षत्र हैं जिन्होंने हिन्दी के गद्य साहित्याकाश को नवप्रकाश एवं विविध रंगों से आलोकित कर परवर्ती गद्यकारों के लिए मार्ग प्रशस्त किया। गद्य विधाओं से जुड़ा उनका साहित्यिक व्यक्तित्व लेखन की उत्कृष्टता के कारण पाठक के मन पर अमिट छाप छोडने में समर्थ है। द्वितीय विश्वयुद्धोपरांत भारतीय सामाजिक परिवेश में आए बदलावों को उनकी साहित्यिक कृतियाँ रेखांकित करती है।

प्रस्तावना

द्वितीय विश्वयुद्धोपरांत आरंभ में जर्मनी में प्रादुर्भूत पाश्चात्य दर्शन 'अस्तित्ववाद' में मानव अस्तित्व पर चर्चा है। उनका मानना है कि मनुष्य का अस्तित्व पहले है और सार सत्ता बाद में। भारतीय दर्शन में भी इस सिद्धांत के बीज विद्यमान हैं। स्वातंत्र्योत्तर भारत में विनिर्मित परिस्थितियों में भारतीय साहित्य इस विचारधारा से अप्रभावित नहीं रह पाया । क्योंकि वर्तमान युग में मानव जीवन की भागदौड़ अस्तित्व रक्षण के लिए है । मनुष्य स्वतः को सिद्ध करने के लिए ही जीवन में अनेकानेक उपक्रम करता है। यही मानव जीवन का सत्य है जिसे स्पर्श किए बिना साहित्यकार नहीं रह सकता। यही कारण है कि स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य का मुख्य स्वर अस्तित्ववादी रहा है। अस्तित्ववादियों द्वारा उठाई गई समस्याएं मानव के इर्द गिर्द घूमती, मंडराती समस्याएं हैं।

मोहन राकेश और अस्तित्ववाद

मोहन राकेश के तीनों उपन्यास 'अंधेरे बंद कमरे ', 'न आने वाला कल' और अंतराल आधुनिक जीवन शैली में मनुष्य के इर्द गिर्द घूमती, मंडराती समस्याओं को विभिन्न पात्रों के माध्यम से मुखर करते हैं। राकेश का प्रथम प्रकाशित उपन्यास 'अंधेरे बंद कमरे' महानगरीय परिवेश को लेकर लिखा गया उपन्यास है। इसमें प्रमुखतः हरबंस और नीलिमा की कथा को लिया गया है। राकेश ने इस उपन्यास में महानगरीय जीवन के संत्रास को अभिव्यक्त किया है। आधुनिक परावर्तित परिवेश में शिक्षित वर्ग के स्त्री-पुरूष संबंध विशेषतः वैवाहिक संबंध और पति-पत्नी संबधों में आए परिवर्तन को भी रेखांकित किया

है। मानव जीवन के अधिकांश तनावों का प्रमुख घटक अर्थाभाव, उच्च मध्यमवर्ग, मध्यम और निम्न वर्ग को भीतर ही भीतर कितना तोड़ देता है जिसकी परिणिति स्वरूप अनायास ही मानव अस्तित्ववादी समस्याओं से ग्रस्त हो जाता है। इस ओर भी संकेत लेखक मोहन राकेश ने आलोच्य उपन्यास के माध्यम से किया है। इसके लिए उन्होंने उच्च मध्यम वर्ग के हरबंस-नीलिमा, मध्यम वर्ग के मधुसूदन- सुषमा , निम्न वर्ग के ठकुराईन और निम्मा जैसे पात्रों को चुना है। उपन्यास में इनके माध्यम से वर्ग विशेष की समस्याओं, असफल दाम्पत्य जीवन, विवाह समस्या, महानगरीय परिवेश में व्यक्ति की अस्तित्व सिद्धि और महत्वाकांक्षा को पूरा करने की आपा-धापी, ऊब, घुटन, संत्रास को व्यंजित किया गया है।

डॉ.उर्मिला मिश्र के अनुसार- "हरबंस और नीलिमा के बीच जो टकराहट है वह पति-पत्नी की नौंक-झोंक नहीं है। वह पुराने और नए मूल्यों की मांग की टकराहट है..लेखक ने 'अंधेरे बंद कमरे' में विवाहित जीवन की अर्थहीनता का सशक्त तथा सजीव रूप खींचने का प्रयास किया है। इस उपन्यास में समस्याओं का समाधान नहीं है लेकिन अधिकार के लिए क्रांति और विरोध का संकेत अवश्य है।"

डॉ. गिरधर प्रसाद शर्मा का मानना है कि "कभी-कभी अधिक शिक्षित पति भी अपनी शिक्षिता और आधुनिका पत्नी के साथ न तो पटरी ही बैठा पाता है और न उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व को ही स्वीकार कर पाता है। 'अंधेरे बंद कमरे' में स्वीकार और अस्वीकार के मध्य झूलते पति-पत्नी के अभिशप्त जीवन के अनेक रूपों का विस्तार है।"

वास्तविकता यह है कि द्वितीय विश्वयुद्ध और भारत-पाक विभाजन जैसी घटनाओं से निर्मित परिस्थितियों का प्रभाव महानगर में रह रहे हर वर्ग पर पड़ा है। उच्च मध्यम वर्ग जहाँ अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के फेर में तथा अपने जीवन स्तर को और ऊँचा उठाने के चक्कर में अपना आत्मिक सुख खोता जा रहा है वहीं निम्न मध्यम वर्ग का जीवन स्तर और निम्नतर होता जा रहा है। इस कारण वह दुःखी है। इन दोनों ही वर्गों के बीच मध्यम वर्ग अपनी समस्याओं से जूझते हुए परेशान है। ऐसे संत्रस्त दुःखी परेशान पात्रों की समस्याओं को चुनकर राकेश ने अपना उपन्यास 'अंधेरे बंद कमरे' लिखा है। उपन्यास के अंत से स्पष्ट है कि लेखक दूसरे पात्रों के जीवन के अंधेरे को कम नहीं कर पाया है। पुराने मूल्यों की जकडन से पूरी तरह विमुक्त न हुए तथा नए मूल्यों को पूरी तरह स्वीकार न कर पाने की दुविधापूर्ण स्थिति के बीच अपनी समस्याओं के साथ जीना ही उनकी नियती है। इन समस्याओं में प्रमुखतः महानगरीय जीवन शैली शिक्षित वर्ग के स्त्री पुरूष और पति-पत्नी संबंध और अस्तित्ववादी दृष्टिकोण से कहें तो युगीन परिवेश का यथार्थ चित्रण महानगरीय जीवन जी रहे पात्रों की ऊब, आर्थिक खींचा-तानी, घुटन, टूटन, तनाव, अलगाव, एकाकीपन, संत्रास, शून्यता बोध और व्यर्थता बोध ही आलोच्य उपन्यास का मुख्य संवेद्य है।

राकेश का दूसरा उपन्यास 'न आने वाला कल' में मिशन स्कूल के वातावरण का यथार्थ चित्रण है कथानायक मनोज वहाँ के ऊब और नीरसता भरे वातावरण से संतुष्ट नहीं है। जीवन में आनंद के लिए वह 7 वर्ष का वैवाहिक जीवन बीता चुकी शोभा से विवाह तो कर लेता है पर वहाँ भी

जीवन में तृप्ति की तलाश पर विराम नहीं लगता। पूरे उपन्यास में मुक्ति की छटपटाहट और तृप्ति की तलाश प्रत्येक पात्र में मिलती है। उपन्यास के पात्र विदेशी मनोभूमि के हैं, जहाँ जीवन की प्रासंगिकता (ईट एण्ड ड्रिंक) खाने और पीने में समाई हुई है। यह अस्तित्व की तलाश नहीं है पर अपने आपको धोखे में रखने का उपक्रम मात्र है। उपन्यास में जितने भी युग्म और एकाकी पात्र है सभी असंतुष्ट रहते हैं। असल में वे अपने होने का अहसास पश्चिम के गरिमामय जीवन में ढूंढते हैं जो उन्हें उपलब्ध नहीं होता। वे सपने कुछ ओर देखते हैं और उन्हें मिलता कुछ और है। इसलिए हर पात्र असंतुष्ट है और वह सदा असंतुष्ट बने रहकर जीने के लिए विवश हैं। इस विवशता का उल्लंघन जब वह करता है तो आत्मघात ही करता है। 'न आने वाला कल' शीर्षक ही एक छटपटाहट को अभिव्यक्त करता है । एक कल उनके सपनों में है पर वह यथार्थ में कभी घटित नहीं होता। अस्तित्ववादी दर्शन में भी यह कल है। पर वहाँ भी यह कल मुट्ठी के बाहर ही रह जाता है। इस प्रकार उपन्यास के समस्त पात्र अस्तित्व की पहचान से जूझते रहते हैं। स्वयं राकेश के व्यक्तित्व में भी ऐसी ही छटपटाहट विद्यमान थी।

इस प्रकार उत्तरोत्तर विघटित होते मानव संबंधों या विवशतापूर्वक निभाए जाने वाले संबंधों के मध्य मानव की टूटन, घुटन, अलगाव, एकाकीपन, ऊब, यौन कुंठा, अकुलाहट के बीच समझौते भरे जीवन का जीवंत चित्रण आलोच्य उपन्यास में है। उपन्यास की यही विशषताएँ उसे अस्तित्ववाद से समपृक्त करती है।

तृतीय उपन्यास अंतराल बदलते परिवेश में मानव संबंधों में आए बदलावों को रेखांकित करने वाला उपन्यास है। उपन्यास में नायक कुमार और नायिका श्यामा दोनों का जीवन रिक्तता से परिपूर्ण है। डेढ वर्ष के वैवाहिक जीवन के पश्चात श्यामा के पति देव की मृत्यु हो जाती है। पति के रहते हुए भी श्यामा स्वयं को एकाकी महसूस करती है और पति की मृत्यु के पश्चात भी वह जीवन में एकाकीपन से उबर नहीं पाती। कुमार भी लता से प्रेम करता है वहाँ उसे असफलता ही मिलती है। इसके बाद वह विवाह करता है पर वह विवाह भी छह माह से अधिक नहीं चल पाता । श्यामा के प्रति आकर्षण भी नामहीन संबंधों में बँधकर रह जाता है। दोनों एक-दूसरे को चाहते हैं, पर परिस्थितियाँ या धर्म, रीति, नीति के बोझ से दबा मन विवाह या विवाहोतर शारीरिक संबंध को बना पाने की स्वीकृति नहीं देता। बस वे नामहीन संबंधों में बँधे-जीते चले जाते है। इस प्रकार मानव संबंधो और उनके मनोभावों को स्वर देने वाली अन्यतम कृति है। आलोच्य उपन्यास में मानव संबंधो की परतों को तह में जाकर खोलने का प्रयास किया गया है। 'अंतराल' मानव संबंधों के बीच आई रिक्तता या दूरी की कहानी है।

विवेच्य उपन्यास में व्यक्ति के भौतिक संबंध का चित्रण है जो किसी न किसी रूप में स्वार्थ पर टिके है। हर पात्र दूसरे पात्र से संबंध इसी तरह बनाए हुए है। आध्यात्मिकता की ओर कोई भी पात्र नहीं जाना चाहता । भौतिक सुखों की प्राप्ति हेतु बनाए गए भौतिक संबंध मानव को तृप्ति या आध्यात्मिक सुख प्रदान करने में असमर्थ है। यही कारण है कि अंतराल के पात्रों के जीवन में सुख नहीं है, हर व्यक्ति अपने बारे में ही सोचता

है। इस तरह वह अधिकाधिक व्यक्तिवादी होता जा रहा है। यह व्यक्तिवादिता भी इंसान को इंसान से दूर कर रही है। इसकी परिणिति व्यक्ति के जीवन में अकेलेपन, अलगाव, ऊब, नीरसता, संत्रस्तता के रूप में होती है और वह अस्तित्ववादी समस्याओं से घिर जाता है। प्रमुखतः 'मैं' 'हूँ' की भावना और इस 'मै' को कायम रखने के मानव प्रयास के दौर में प्रतिकूल परिस्थितियों में संघर्षशील मानव की समस्याओं का चित्रण एवं मानव मूल्यों के खोखलेपन को अंतराल उपन्यास में मुखर किया गया है।

मोहन राकेश मूलतः महानगरीय सभ्यता को ही केन्द्र में रखकर चलते हैं। उनके सभी उपन्यासों की विषय वस्तु एक निश्चित सीमा में आबद्ध रहती है। इन सबके बावजूद मोहन राकेश के उपन्यास अपनी सीमा में बेहद रोचक ढंग से अस्तित्ववादी चेतना को प्रदर्शित करते चलते हैं। अंतराल हो या उनके अन्य उपन्यास महानगरों की भूमि के घेरेबंदी से बाहर नहीं आ पाते । मोहन राकेश का अपना जीवन भी स्व-निर्मित घेरे में कैद रहा है। अस्तित्ववादी अवधारणा मनुष्य के अपने होने की सार्थकता है। परंतु दार्शनिक घाटाटोप में केवल होना ही शेष रह जाता है। सार्थकता का सवाल वहाँ पैदा ही नहीं होता । हर अंतराल के बाद मनुष्य घूम फिरकर वहीं पहुँच जाता है जहाँ से वह चला था।

इस प्रकार मोहन राकेश के तीनों उपन्यास एक सूत्र में गूँथे प्रतीत होते है। मानव समस्याओं से ग्रस्त हो अंतर्मुखी और व्यक्तिवादी होता जा रहा है। उनके उपन्यासों में सुख की तलाश हेतु किए गए तमाम प्रयासों के बावजूद Fullfillment का बोध किसी 'अंधेरे बंद कमरे' के भीतर ही रहता है। शुक्ला जैसे पात्र भी उनके जीवन के अंधेरों को उजियारे में परिवर्तित करने में असमर्थ ही रहते है। असफल प्रयासों की घुटन पात्रों को भीतर तक तोड़ देती है और मानव मन की सहज कल्पना जो स्वर्णिम कल के लिए होती है उसे भी राकेश के पात्र 'न आने वाला कल' के रूप में स्वीकार करते हैं और अपने जीवन में किसी न किसी रूप में 'अंतराल', रिक्तता या खालीपन का बोध लिए विवशतापूर्णजीवन को नियति स्वीकर करते हैं।

'राकेश के तीनों उपन्यासों के विशद एवं सूक्ष्म अध्ययन के पश्चात इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उनकी चिंतन प्रणाली तथा परिवेशबोध में एक विकास है और यह विकास स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर अग्रसर है। महानगरीय सभ्यता के दमघोटू वातावरण में आधुनिकता के नाम पर बनते-बिगड़ते, उलझते- सुलझते मानव संबंधों की दारूण नियति का यथार्थ दर्शन हिन्दी उपन्यास में नया कहा जाएगा। यह नयापन मात्र कथ्य और शिल्प में नहीं अपितु बदले परिवेश और नये सन्दर्भों के अंकन में है तथा उनमें खोये व्यक्तित्व के अस्तित्व की खोज में है। दाम्पत्य जीवन की निरर्थकता, अकेलेपन का अहसास, प्रेम की मांसल तथा मानसी दृष्टि, बेनाम संबंधों का अस्तित्व आदि का अंकन राकेश के आधुनिक परिवेश बोध की पुष्टि करता है।'

निष्कर्ष

उनके तीनों उपन्यास अस्तित्वबोध, पारिवारिक बिखराव, असफल दाम्पत्य संबंध, विवाह समस्या, पात्रों की वैयक्तिक महत्वाकांक्षाओं, ऊब, घुटन, टूटन, अलगाव, एकाकीपन को चित्रित करने वाले अस्तित्वादी उपन्यास हैं। भारतीय सन्दर्भों में महानगरों में व्यक्ति अपने अस्तित्व को खोता

चला जा रहा है। मनुष्य वस्तु में परिवर्तित होता जा रहा है। राकेश के उपन्यास महानगरीय परिवेश में जी रहे पात्रों की मन की कुण्ठा और अस्तित्व सिद्धि के प्रयासों की छटपटाहट के स्वर को मुखर करते हैं।

स्पष्ट किया ही जा चुका है कि अस्तित्ववाद का केन्द्र बिंदु है - मानव और उसकी समस्याएं चूंकि मनुष्य सामाजिक प्राणी है अतः राकेश के उपन्यास सामाजिक बदलावों को भी सहज ही रेखांकित करते हैं और अपनी साहित्यिक रचनाओं को समाज से संपृक्त बन जाने में समर्थ होते हैं, इसीलिए उनकी प्रासांगिकता निर्विवाद बनी हुई है।

सन्दर्भ

1 सुरेशचंद्र चुलकीमठ -मोहन राकेश का साहित्य